[2019] 9 एस०सी०आर० 790

कांता यादव
बनाम
ओम प्रकाश यादव एव अन्य।

(सिविल अपील संख्या 5823/2019) जुलाई 24, 2019

[एल० नागेश्वर राव और हेमंत गुप्ता, न्यायमूर्तिगण]

भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम 1925 की धाराएं–57 व 213। एक 'जेडएस' नई दिल्ली में कुछ अचल संपत्ति का मालिक था। उसने वसीयत दिनांकित–16.06.1985 और क्रोड़–पत्र दिनांकित–21.10.1985 की वसीयत दोनों पक्षों के पक्ष में अपनी स्व अर्जित संपत्ति से की। 'जेडएस.' की मृत्यु हो गयी। दो मुकदमें दायर किये गये। एक मुकदमा उत्तरदाताओं में से एक ने 'जेडएस.' के द्वारा निष्पादित वसीयत और उदित्सा और 'जेडएस.' की पत्नी द्वारा निष्पादित वसीयत दिनांकित–18.06.2009 के संबंध में स्थायी निषेधाज्ञा हेतु और अन्य मुकदमा अपीलकर्ता द्वारा नैसर्गिक उत्तराधिकार का दावा करते हुए दाखिल किया गया। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि धारा–213 का प्रयोज्य वर्जित नहीं है और वाद नामंजूर के आदेश को अपास्त करते हुए निर्देशित किया कि दोनों वाद समेकित कर दिये जाये और सामान साक्ष्य के आधार पर अग्रसारित किया जाये। यह विवाद्यक कि क्या दिल्ली की राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र में धारा–213 के अन्तर्गत वसीयत के संबंध में प्रोबेट या प्रशासन पत्र लेना आवश्यक है, यह अभिनिर्धारित किया गया कि वर्तमान राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली 01.11.1966 से पहले पूर्ववर्ती पंजाब राज्य का हिस्सा था और वैधानिक प्रावधान स्पष्ट है कि 1925 का अधिनियम किसी भी हिन्दू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा निष्पादित की गयी वसीयत या क्रोड़–पत्र पर लागू है, जो कि उपराज्यपाल बंगाल के क्षेत्राधिकार या मद्रास या बाम्बे उच्च न्यायालय के समान्य मूल नागरिक क्षेत्राधिकार के स्थानीय सीमाओं के अधीन थे। {खंड क धारा–57} द्वितीय, उन क्षेत्रों के बाहर निष्पादित की गयी सभी वसीयतों और क्रोड़–पत्र पर लागू होता है और जहाँ तक सीमाएं उपरोक्त क्षेत्रों के भीतर अचल संपत्ति से संबंधित है। [खंड–ख धारा–57] खंड–ग धारा–57 उन वसीयत व क्रोड़–पत्र से संबंधित है, जो 01 जनवरी 1927 से या उसके बाद किसी हिन्दू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा निष्पादित की गयी है, जिस पर खंड–क व खंड–ख के प्रावधान लागू नहीं होता है। यद्यपि धारा–213 की उपधारा–2 के केवल हिन्दू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा निष्पादित की गयी वसीयतों पर लागू होता है, जहाँ ऐसी वसीयतें धारा–57 खंड–क व खंड–ख के निर्देशित वर्गों से संबंधित है। इस प्रकार खंड–ग धारा–213 (2) के कारण प्रयोज्य नहीं है। उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय में कोई त्रुटि नहीं है।

न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए अभिनिर्धारित किया कि–

वैधानिक प्रावधान स्पष्ट है कि 1925 का अधिनियम किसी भी हिन्दू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा निष्पादित की गयी वसीयत या क्रोड़–पत्र पर लागू है, जो कि उपराज्यपाल बंगाल के क्षेत्राधिकार या मद्रास या बाम्बे उच्च न्यायालय के समान्य मूल नागरिक क्षेत्राधिकार के स्थानीय सीमाओं के अधीन थे। {खंड क धारा–57} द्वितीय, उन क्षेत्रों के बाहर निष्पादित की गयी सभी वसीयतों और क्रोड़–पत्र पर लागू होता है और जहाँ तक सीमाएं उपरोक्त क्षेत्रों के भीतर अचल संपत्ति से संबंधित है। [खंड–ख धारा–57] खंड–ग धारा–57 उन वसीयत व क्रोड़–पत्र से संबंधित है, जो 01 जनवरी 1927 से या उसके बाद किसी हिन्दू, बौद्ध या जैन द्वारा निष्पादित की गयी है, जिस पर खंड–क व खंड–ख के प्रावधान लागू नहीं होता है। यद्यपि धारा–213 की उपधारा–2 के केवल हिन्दू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा निष्पादित की गयी वसीयतों पर लागू होता है, जहाँ ऐसी वसीयतें धारा–57 खंड–क व खंड–ख के निर्देशित वर्गों से संबंधित है। इसके मद्देनजर, उन व्यक्तियों के संबंध में वसीयत और क्रोड़–पत्र जो बंगाल के उपराज्यपाल के अधीन हैं या जो मद्रास या बॉम्बे उच्च न्यायाालय के सामान्य मूल नागरिक क्षेत्राधिकार की स्थानीय सीमा के भीतर हैं और स्थित अचल संपत्तियों के संबंध में हैं। पंजाब और हरियाणा राज्यों के साथ–साथ दिल्ली में और क्लेरेंस पेस मामले मे सुप्रीम कोर्ट द्वारा ऊपर उल्लिखित कई निर्णयों में यही दृष्टिकोण अपनाया गया है। उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा पारित फैसले में कोई त्रुटि नहीं है। [पैरा 12–14] [797–जी०–एच०; 798–ए०–ई०]

क्लेरेंस पेस और अन्य बनाम भारत संघ (2001) 4 एस०सी०सी० 325 : [2001] 2 एस०सी०आर० 43 – पर निर्भर।

राम चंद बनाम सरदारा सिंह और अन्य ए०टी०आर० 1962 पी०&एच० 382; श्री बिहारी लाल राम चरण बनाम करम चंद साहनी और अन्य 1968 ए०आई०आर० (पंजाब) 108; श्रीमती विनीफ्रेड नोरा थियोफिलस बनाम श्री लीला डीन और अन्य ए०आई०आर० 2002 दिल्ली 6; श्री राजन सूरी और अन्य बनाम राज्य और अन्य ए०आई०आर० 2006 दिल्ली 48 – संदर्भित। उच्चतम न्यायालय रिपोर्ट [2019] 9 एस०सी०आर०।

Vetted by Ambesh Kumar Pandey, Addl. Civil Judge (Jr. Div.)

केस लॉ संदर्भ

ए०आई०आर० 1962 पी&एच० 382 को पैरा 7 1968
ए०आई०आर (पंजाब) 108 को पैरा 8
ए०आई०आर० 2002 दिल्ली 6 को पैरा 9
ए०आई०आर० 2006 दिल्ली 48 को पैरा 10 संदर्भित किया गया
[2001] 2 एस०सी०आर० 43 निर्भर पैरा 11 पर है।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2019 की सिविल अपील संख्या 5823।

2016 के आर०एफ०ए० (मूलवाद) संख्या 35 में दिल्ली उच्च न्यायालय, नई दिल्ली के निर्णय और आदेश दिनांक 13.02.2017।

अपीलकर्ता के लिए अधिवक्ता–जुगल वाधवा, ऋषभ वाधवा, चिराग जोशी, घनश्याम जोशी।

उत्तरदाताओं के लिए अधिवक्ता– सैयद हसन इस्फहानी, अनुप जैन, सुश्री महिमा गुप्ता, विवेक जैन।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ती हेमंत गुप्ता द्वारा सुनाया गया। अपील स्वीकृत।

2. वर्तमान में चुनौती 13 फरवरी, 2017 को दिल्ली उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा पारित एक आदेश को दी गई है, जिसके तहत एकल पीठ द्वारा पारित आदेश दिनांकित 14 मार्च, 2016 के विरूद्ध एक इंट्रा कोर्ट अपील स्वीकार कर ली गई थी। विद्वान एकल पीठ ने सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 7 नियम 11 के अन्तर्गत आवेदन की अनुमति देते हुए कहा कि भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम, 1925 की धारा 213 के मद्देनजर घोषणात्मक और स्थायी निषेधाज्ञा का मुकदमा सुनवाई योग्य नहीं है।

3. वर्तमान अपील के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि जोरावर सिंह नाम का व्यक्ति नई दिल्ली में अचल संपत्ति का मालिक था। उन्होंने 16 जून, 1985 को एक वसीयत और 21 अक्टूबर, 1995 को क्रोड़–पत्र निष्पादित करते हुए दोनों पक्षों के पक्ष में स्व–अर्जित संपत्ति की वसीयत कर दी। 4 जनवरी, 1986 को जोरावर सिंह की मृत्यु हो गई। दो मुकदमें दायर किए गए। जिसमें मूलवाद संख्या 3310 वर्ष 2012 के उत्तरदाताओं में से एक ने जोरावर सिंह द्वारा निष्पादित वसीयत और क्रोड़–पत्र के संबंध में और उसकी पत्नी रामप्यारी द्वारा निष्पादित वसीयत दिनांकित 18, 2009 के संबंध में घोषणात्मक और स्थायी निषेधाज्ञा के दावे हेतु दाखिल किया गया और दूसरा मूलवाद संख्या 430 वर्ष 2012 को वर्तमान अपीलकर्ता ने नैषर्गिक उत्ताराधिकार के आधार पर दाखिल किया।

4. उच्च न्यायालय की खण्डपीठ ने अभिनिर्धारित किया कि अधिनियम की धारा 213 के तहत रोक लागू नहीं है और इसलिए वाद के निरस्तीकरण के आदेश को अपास्त कर दिया और निर्देश दिया कि दोनो मुकदमो को एक साथ समेकित किया जाये तथा सामान साक्ष्य के आधार पर अग्रसारित किया जाये।

5. जो संक्षिप्त विवादित प्रश्न है यह कि क्या राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में अधिनियम की धारा 213 के संदर्भ में वसीयत के संबंध में प्रोबेट या प्रशासन पर लेना आवश्यक है।

6. यह निर्विवाद है कि वर्तमान राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली 1 नवम्बर, 1966 से पहले पंजाब राज्य का हिस्सा था। उत्तरादाताओं द्वारा उठाया गया तर्क यह है कि अधिनियम की धारा 57 वहां लागू होती जहां संपत्तियां और पक्ष अन्तर्गत है बंगाल मद्रास या बॉम्बे के क्षेत्र में स्थित है, इसलिए संपत्तियां या व्यक्तियो के संबंध में प्रोवेट या प्रशासन पत्र की मांग करना आवश्यक नहीं है जब वो बंगाल मद्रास या बॉम्बे राज्यों में स्थित नहीं है। उक्त प्रश्न की जांच करने के लिए कुछ वैधानिक प्रावधानो के यहां उद्धृत करना प्रासांगिक है।

> 213. निष्पादक या वसीयतदार के रूप में अधिकारिता कब स्थापित होती है–(1) निष्पादक या वसीयतदार के रूप में कोई अधिकार किसी न्यायालय में तब तक स्थापित नहीं किया जा सकता है जब तक [भारत] के सक्षम अधिकारिता वाले किसी न्यायालय ने ऐसी विल का प्रोबेट, जिसके अधीन उस अधिकार का दावा किया गया है, अनुदत्त न किया हो या विल उपाबद्ध करके या विल की प्राधिकृत प्रति की एक प्रति उपाबद्ध कर के प्रशासन–पत्र अनुदत्त न किया हो ।

[(2)यह धारा मुस्लिमों [या भारतीय क्रिश्चियनों] द्वारा किए गए विलों के मामलों में लागू नहीं होगी और केवल निम्नलिखित मामलों में लागू होगी: –

(i) किसी हिन्दू, बौद्ध, सिख जैन द्वारा किए गए विलों के मामले में, जहां ऐसे विल धारा ५७ के खंड (क) और (ख) में विनिर्दिष्ट वर्गों के हैं; और

(ii) भारतीय उत्तराधिकार (संशोधन) अधिनियम, 1962 (1962 का 16) के प्रारम्भ के पश्चात् मरने वाले किसी पारसी द्वारा किए विलों के मामलों में, जहां ऐसे विल कलकत्ता, मद्रास और मुंबई स्थित उच्च न्यायालयों की [मामूली आरंभिक सिविल अधिकारिता] की स्थानीय सीमाओं के भीतर किए गए हैं और जहां ऐसे विल उन सीमाओं के बाहर किए गए हैं वहां जहां तक उनका सम्बन्ध उन सीमाओं के भीतर स्थित स्थावर सम्पत्ति से है ।

धारा 57– इस भाग्य के कतिपय उपबन्धों का हिन्दुओं आदि द्वारा किए गये विलों के एक वर्ग को लागू होना– इस भाग के वे उपबंध, जो अनुसूचि 3 में उपवर्णित है, उसमें विनिर्दिष्ट निर्बन्धनों और उपांतरणों सहित–

(क) ऐसे सभी विलों और क्रोडपत्रों को लागू होंगे जो किसी हिंदू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा 1870 के सितम्बर के प्रथम दिन या उसके पश्चात उस राज्य क्षेत्र में किये गये जो उक्त तारीख को बंगाल के लैफ्टिनेंट गवर्नर के अधीन या मद्रास या मुम्बई उच्च न्यायालय की मामुली आरंभिक सिविल आधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर आते है; और

(ख) ऐसे सभी विलों और क्रोडपत्रों को, जो ऐसे राज्य क्षेत्र या सीमाओं के बाहर किये गये है, वहां तक लागू होगे जहाँ तक उनका संबंध उन राज्य क्षेत्रो या सीमाओं के भीतर स्थिर स्थावर संपत्ति से है; और

(ग) ऐसे सभी विलों और क्रोडपत्रों को लागू होगे जो किसी हिंदू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा 1927 के जनवरी के प्रथम दिन या उसके पश्चात किये गये है और जिनपर उन उपबन्धों के खण्ड (क) और (ख) द्वारा लागू नहीं किया गया है। परन्तु विवाह ऐसे किसी विल या क्रोडपत्र को प्रतिसंहृत नहीं करेगा।

7. उक्त प्रावधानो की जांच की गई तथा पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय और दिल्ली उच्च न्यायालय के द्वारा बार बार विचार किया गया। राम चंद बनाम सरदारा सिंह और अन्य में पंजाब उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार व्यवस्था दी।

"4. ...इन प्रावधानो का स्पष्ट प्रभाव यह प्रतीत होता है कि प्रोबेट की आवश्यकता वाली धारा 213 (1) के प्रावधान बंगाल और मद्रास और बॉम्बे में उच्च न्यायालयों की स्थानीय मूल क्षेत्राधिकार सीमाओ के बाहर बनायी गई वसीयतो पर लागू नहीं होती है, सिवाय इसके जहां ऐसी वसीयते उन क्षेत्रो के भीतर स्थित अचल संपत्ति से संबंधित हो।

5. मामले मे न्यायमूर्ति शमशेर बहादुर के निर्णय पर विचार किया जाना बाकी है। ऊपर उल्लेख किया गया है, जो स्पष्ट रूप से गनशमदॉस नारायणदॉस बनाम गुलाब बी बाई, (1 एल०आर० 50 मद्रास, 927) में पूर्ण पीठ के निर्णय पर आधारित है। हालाँकि, इस निर्णय को पढ़ने पर मुझे लगता है कि जो माना गया है वह यही है कि वादी द्वारा उत्तराधिकारी के रूप में किये गये दावे का विरोध करने वाला प्रतिवादी मद्रास मे संपत्ति के संबंध में मद्रास मे उसके पक्ष मे निष्पादित वसीयत के प्रतिरक्षा मे भरोसा नहीं कर सकता है, जब वसीयत की जांच नही की जाती है और वसीयत के साथ साथ कोई पत्र प्रदान नहीं किया गया हो। यह स्पष्टता अधिनियम की धारा 213 और 57 (ए) के प्रावधानो के अनुरूप है और एकमात्र बिन्दु जिसपर यह मामला पूर्ण पीठ को भेजा गया था कि क्या बिना प्रोबेट के मुकदमे में प्रतिरक्षा के लिये वसीयत स्थापित की जा सकती है?

6. जैसा कि मैने कहा है कि अधिनियम के प्रावधानो को स्पष्ट रूप से पढ़ने से इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता है कि पंजाब में निष्पादित वसीयत के आधार पर चल अचल संपत्ति के संबंध दावा स्थापित करने के लिए कोई प्रोबेट आवश्यक नहीं है और धारा 57 (ए) मे उल्लिखित क्षेत्रो में से संबंधित नहीं है। मैं तदनुसार पुनरीक्षण याचिका स्वीकार करता हूँ और निचली अदालत के आदेश को अपास्त करता हूँ जिसमें याचिकाकर्ता को प्रोबेट प्राप्त करने की आवश्यकता थी। इस मामले का निस्तारण अब निचली अदालत द्वारा किया जा सकता है, जहां पक्षकारों को 4 दिसम्बर, 1961 को पेश होने के निर्देश दिया जाता है। पक्षकार इस न्यायालय में अपना खर्चा स्वयं वहन करेगें

Vetted by Ambesh Kumar Pandey, Addl. Civil Judge (Jr. Div.)

8. उक्त दृष्टिकोण की पुष्टि मैसर्स बिहारी लाल रामचरन बनाम करम चंद साहनी व अन्य के मामलें में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा की गयी।

> "3. इन दोनो धाराओं के अवलोकन से स्पष्ट है कि प्रतिवादी सं० 1 द्वारा विचारण न्यायालय के समक्ष प्रारंभिक वाद बिन्दु पर उठायी गई आपत्ति बिना किसी तथ्य की थी। यदि धारा 57 के खण्ड (ए) को सपठित धारा 213 के धारा 2 के साथ पढ़ा जाता है तो ऐसा प्रतीत होता है कि उन मामलों पर लागू होगा जहां संपत्ति और पक्ष बंगाल मद्रास और बॉम्बे के क्षेत्रो में स्थित है, जबकि खण्ड (ख) उन मामलों में लागू होगा जहां पक्षकार उन क्षेत्रों में नहीं है लेकिन इसमें शामिल संपत्ति उन क्षेत्रों के अन्दर स्थित है। हालाँकि, धारा 57 का खण्ड (ग) वर्तमान उद्देशों के लिए प्रासंगिक नहीं है। इसलिए जहां हिन्दू, बौद्ध या जैन व्यक्ति या उसकी संपत्ति दोनो उल्लिखित क्षेत्रो से बाहर है तब धारा 213 उपधारा (1) की कठोरता लागू नहीं होती है। विद्वान संदर्भित न्यायधीश द्वारा श्रीमती हेम नॉलिनी बनाम श्रीमती आइसोल्व सरोजबाशिनी बोस, ए०आई०आर० 1962 एस०सी० 1471 में उच्चतम न्यायालय के एक आदेश का संदर्भ दिया गया था लेकिन उस मामले में पक्षकार इसाई थे (जिनके लिए वह सहमत थे कि धारा 57 लागू नहीं होती) और उनके अ◌ाधिपत्य ने केवल अधिनियम की धारा 213 के उपधारा (1) के निहितार्थों पर विचार किया, न की धारा 57 के खण्ड (क) और (ख) सपठित धारा 213 के उपधारा (2) के निहितार्थ पर। विद्वान एकल न्यायाधीश ने शायद न्यायमूर्ति शमशेर बहादुर द्वारा केसर सिंह और अन्य बनाम तेज कौर 1961 पी०एल०आर० 473 में अपनाये गये दृष्टिकोण के कारण कठिनाई महसूस की होगी, लेकिन उस निर्णय पर न्यायमूर्ति फालशॉ द्वारा राम चन्द बनाम सरदारा सिंह 1962 पी०एल०आर० 265 में विचार किया गया था, जिसमें वो न्यायमूर्ति शमशेर बहादुर द्वारा उपरोक्त मामले में अपनाये गये दृष्टिकोण से भिन्न है, तथा अभिनिर्धारित किया कि चल व अचल संपत्ति के संबंध में दावा दाखिल करने हेतु किसी प्रोबेट की आवश्यकता नहीं है जब वसीयत पंजाब में निष्पादित की गई हो। तथा प्रोबेट प्राप्त किये बिना वसीयत के आधार पर उत्तराधिकार प्रमाण पत्र दिया जा सकता है। केसर सिंह के मामले में न्यायमूर्ति शमशेर बहादुर के फैसले का जिक्र करते हुए न्यायमूर्ति फाल्शॉ ने कहा कि शमशेर बहादुर, न्यायमूर्ति द्वारा लिया गया दृष्टिकोण स्पष्ट रूप से गनशोमदास बनाम गुलाब बी राय आई०एल०आर० 50 मद्रास 1927 में पूर्ण पीठ के फैसले पर आधारित था, जहाँ यह माना गया कि वादी द्वारा उत्तराधिकारी के रूप में किये गये दावे का विरोध करने वाला प्रतिवादी मद्रास में संपत्ति के संबंध में मद्रास में उसके पक्ष में निष्पादित वसीयत पर प्रतिरक्षा में भरोसा नहीं कर सकता, जब वसीयत की जांच नहीं की गई थी और वसीयत के साथ प्रशासन का कोई पत्र संलग्न नहीं किया गया था। मद्रास का मामला स्पष्ट रूप से अधिनियम की धारा 213 व सपठित धारा 57 के अनुरूप था। हम रामचंद के मामले में फाल्शॉ, न्यायमूर्ति द्वारा अपनाये गए दृष्टिकोण से सहमत है। इसी तरह का विचार जयलाल, न्यायमूर्ति ने सोहन सिंह बनाम भाग सिंह ए०आई०आर० 1934 लाहौर 599 में व्यक्त किया था, और मेरे द्वारा सी०आर० 340–डी०/1965 (राधे लाल बनाम लाडली पार्षद) में 24 अगस्त, 1965 को निर्णय दिया गया था। यहां तक की अधिनियम की धारा 57 पर सरसरी नजर डालने से ही संदेह की कोई गुनजाइश नहीं रह जाती है कि ऊपर उल्लिखित मामले में शमशेर बहादुर, न्यायमूर्ति द्वारा लिया गया दृष्टिकोण गलत था। ऐसा प्रतीत होता है कि ऊपर उल्लिखित सोहल सिंह बनाम भाग सिंह का मामला उनके संज्ञाम में नहीं लाया गया था।"

9. श्रीमती विनीफ्रेड नोरा थियोफिसल बनाम श्री लीला डीन और अन्य में दिल्ली उच्च न्यायालय के एकल पीठ निम्नानुसार व्यवस्था दी;

> "11. धारा 57 (ए) और (बी) के साथ पढ़ी गयी धारा 213 की व्याख्या पर, न्यायालयों ने राय दी है कि जहां वसीयत हिंदू, बौद्ध, सिख, जैन द्वारा बनाई गयी है और बंगाल के उपराज्यपाल के अधीन है या मद्रास और बॉम्बे में न्यायिक उच्च न्यायलयों के सामान्य मूल नागरिक क्षेत्राधिकार की स्थानीय सीमा के भीतर है या यहां तक की बाहर किये गये लेकिन उपरोक्त क्षेत्रों के भीतर अचल संपत्ति से संबंधित है, धारा 213 में निहित प्रतिबंध लागू होंगे। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि वसीयत हिंदू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा बंगाल, मद्रास और बॉम्बे के बाहर की गई है तो धारा 213 में निहित प्रतिबंध लागू नहीं होगा। प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत विभिन्न न्याय निर्णय यही तय करते है। इसलिए इस निष्कर्ष पर पहुँचने में कोई समस्या नहीं है कि यदि दिल्ली में स्थित अचल संपत्ति के संबंध में हिंदू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा दिल्ली में वसीयत बनाई गई है तो किसी प्रोबेट की आवश्यकता नहीं है।

10. दिल्ली उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा श्री राजन सूरी और अन्य बनाम राज्य और अन्य के मामले में खण्डपीठ के फैसले और दिल्ली उच्च न्यायालय के कुछ अन्य एकल पीठ के फैसलों को निम्नानुसार निकालने के लिए संदर्भित किया:

Vetted by Ambesh Kumar Pandey, Addl. Civil Judge (Jr. Div.)

"33. उपरोक्त का परिणाम यह है कि याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इस दलील के समर्थन में संदर्भित निर्णय की पूरी पंक्ति की प्रोबेट अनिवार्य है, वर्तमान तथ्यों के मामले पर कोई लागू नहीं होगा और इस प्रकार संपार्श्विक कार्यवाही में निष्कर्ष निकाला जायेगा जिस मुकदमे में याचिकाकर्ता पक्षकार थे, उसमे कार्यवाही याचिकाकर्ता को बाध्य करेगी।"

11. उत्तरदाताओं के विद्वान अधिवक्ता ने क्लेरेंस पेस और अन्य बनाम भारत संघ में उच्चतम न्यायालय के फैसले का भी हवाला दिया जिसमें अधिनियम की धारा 213 को की वैधता को ईसाइयों के खिलाफ असंवैधानिक और भेदभावपूर्ण बताते हुए चुनौती दी गयी थी। इस न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय लिया।

"6. अधिनियम की धारा 213 और 57 को संयुक्त रूप से पढ़ने से पता चलेगा कि यहां वसीयत के पक्षकार हिंदू है या विवाद में संपत्तियां धारा 57 (ए) और (बी), अधिनियम की धारा 213 के उपधारा (2) लागू होती है और उपधारा (1) का कोई अनुप्रयोग नहीं है। परिणामस्वरूप, किसी हिंदू को उन क्षेत्रों के बाहर की गई वसीयत के संबंध में या उन क्षेत्रों के बाहर स्थित अचल संपत्तियों के संबंध में प्रोबेट करने की आवश्यकता नहीं होगी। नतीजा यह है कि याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क दिया गया कि अधिनियम की धारा 231 (1) केवल ईसाइयों पर लागू होती है, किसी अन्य धर्म पर नहीं, सही नहीं है।

12. वैधानिक प्रावधान स्पष्ट है कि अधिनियम किसी भी हिन्दू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा निष्पादित की गयी वसीयत या क्रोड़–पत्र पर लागू है, जो कि उपराज्यपाल बंगाल के क्षेत्राधिकार या मद्रास या बाम्बे उच्च न्यायालय के समान्य मूल नागरिक क्षेत्राधिकार के स्थानीय सीमाओं के अधीन थे। {खंड क धारा–57} द्वितीय, उन क्षेत्रों के बाहर निष्पादित की गयी सभी वसीयतों और क्रोड़–पत्र पर लागू होता है और जहाँ तक सीमाएं उपरोक्त क्षेत्रों के भीतर अचल संपत्ति से संबंधित है। [खंड–ख धारा–57] खंड–ग धारा–57 उन वसीयत व क्रोड़–पत्र से संबंधित है, जो 01 जनवरी 1927 से या उसके बाद किसी हिन्दू, बौद्ध या जैन द्वारा निष्पादित की गयी है, जिस पर खंड–क व खंड–ख के प्रावधान लागू नहीं होता है। यद्यपि धारा–213 की उपधारा–2 के केवल हिन्दू, बौद्ध, सिख या जैन द्वारा निष्पादित की गयी वसीयतों पर लागू होता है, जहाँ ऐसी वसीयतें धारा–57 खंड–क व खंड–ख के निर्देशित वर्गों से संबंधित है। इस प्रकार खंड–ग धारा–213 (2) के कारण प्रयोज्य नहीं है। उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय में कोई त्रुटि नहीं है।

13. इसके मद्देनजर, उन व्यक्तियों के संबंध में वसीयत और क्रोड़–पत्र, जो बंगाल उपराज्यपाल के अधीन है या जो मद्रास या बॉम्बे उच्च न्यायालय के सामान्य मूल नागरिक क्षेत्राधिकार की स्थानीय सीमा के भीतर है तथा उपरोक्त तीनों क्षेत्रो के अन्तर्गत संपत्ति स्थित है। पंजाब और हरियाणा राज्यों के साथ–साथ दिल्ली में और क्लेरेंस पेस में इस न्यायालय द्वारा ऊपर उल्लिखित कई निर्णयों में यही दृष्टिकोण अपनाया गया है।

14. उपरोक्त के मद्देनजर, हमें दिल्ली उच्च न्यायालय की खण्डपीठ द्वारा पारित निर्णय में कोई त्रुटि नहीं मिलती है। परिणामस्वरूप, अपील खारिज की जाती है।

अपील खारिज।

Vetted by Ambesh Kumar Pandey, Addl. Civil Judge (Jr. Div.)